गीतगोविन्द

जयदेव द्वारा रचित '**गीतगोविन्द**' साहित्य जगत की एक अनुपम कृति है। इसकी मनोरम रचना शैली, भावप्रवणता, सुमधुर राग-रागिणी, धार्मिक तात्पर्यता तथा सुमधुर कोमल-कान्त-पदावली साहित्यिक रस पिपासुओं को अपूर्व आनन्द प्रदान करती है। गीतगोविन्द में श्रीकृष्ण की गोपिकाओं के साथ रासलीला, राधाविषाद वर्णन, कृष्ण के लिए व्याकुलता, उपालम्भ वचन, कृष्ण की राधा के लिए उत्कंठा, राधा की सखी द्वारा राधा के विरह संताप का वर्णन है।

जयदेव का जन्म ओडिशा में भुवनेश्वर के पास **केन्दुबिल्व** नामक ग्राम में हुआ था। वे बंगाल के सेनवंश के अन्तिम नरेश लक्ष्मणसेन के आश्रित महाकवि थे। लक्ष्मणसेन के एक शिलालेख पर ११११६ ई० की तिथि है अतः जयदेव ने इसी समय में गीतगोविन्द की रचना की होगी।

परिचय

गीतगोविन्द १२वी शताब्दी में लिखी गयी एक ऐसी काव्य रचना है जो हमे भगवान कृष्ण और राधारानी के प्रेम के बारे में बताती है। इसमे कुल १२ अध्याय है। यह काव्य ओडिशा राज्य के भुवनेश्वर और पुरी शहर के मध्यवर्ती केन्दुबिल्व या केन्दुलि शासन नाम के गांव में वास करने वाले ब्राह्मण जयदेव की कृति है। जयदेव की पत्नी का नाम पाद्मावति है।

राधा-कृष्ण की केलि-कथाओं तथा उनकी अभिसार-लीलाओं का रसमय चित्रण 'गीतगोविन्द' को आध्यात्मिक शृंगार का मनोरम ग्रन्थ बना देता है। राधा-कृष्ण के प्रणय के चित्रण में प्रेम की विविध दशाओं—आशा, निराशा, उत्कण्ठा, ईर्ष्या, कोप, मान, आक्रोश, मिलनोत्सुकता, सन्देश-प्रेषण तथा मिलन आदि—का जैसा अभिभूत करने वाला हृदयग्राही चित्रण इस काव्य में हुआ है, वैसा अन्यत्र ढूंढने पर भी कहीं नहीं मिलता।

श्रीकृष्ण के गोपियों के साथ रास-विलास को राधा न पसन्द करती है और न ही सहन कर पाती हैं। राधा अपनी सखी के माध्यम से श्रीकृष्ण के प्रति अपना आक्रोशमूलक उपालम्भ भेजती है, परन्तु उस अनन्य

प्रणयिनी को इतने से सन्तोष नहीं होता, उसका प्रेम निर्भर-हृदय उसे अपने प्रियतम के प्रति अपने प्रगाढ़ अनुराग को व्यक्तिगत रूप से प्रकट करने को विवश कर देता है। राधा के आने पर श्रीकृष्ण ब्रज-सुन्दरियों का संग छोड़कर उसकी ओर उन्मुख होते हैं। राधा की सखी श्रीकृष्ण से राधा की और राधा से श्रीकृष्ण की एक-दूसरे में गहन अनुरक्ति का तथा एक-दूसरे से दूर रहने पर अनुभव की जा रही विरहजन्य वेदना का मार्मिक वर्णन करती है। वह अपने कोमल एवं कमनीय वचनों द्वारा दोनों को एक-दूसरे से मिलने के लिए प्रेरित करती है।

चन्द्रोदय होने पर प्रणय-व्यथा से अधीर बनी राधा अपने उद्दीप्त अनुराग पर नियंत्रण नहीं रख पाती और उसकी अभिव्यक्ति को विवश हो जाती है। श्रीकृष्ण के आने पर अति मान करती हुई राधा उपालम्भ से भरे वचनों के द्वारा उनके प्रति अपना रोष-आक्रोश प्रकट करती है। इधर राधा की सखी राधा से मान को छोड़ने का अनुरोध करती है उधर स्वयं श्रीकृष्ण राधा के रूप-सौन्दर्य की प्रशंसा के व्याज से उसकी चाटुकारिता करते हुए उसे मनाने एवं अपने अनुकूल बनाने की चेष्टा करते हैं। अन्ततः राधा का मान दूर हो जाता है और वह अपने कान्त से मिलने के लिए कदम्ब-कुंज में जाती है।

दोनों प्रसन्न मन से प्रणय-व्यापार में प्रवृत्त होते हैं और इसके उपरान्त राधा प्रणयसिक्त वचनों से अपने प्रियतम श्रीकृष्ण से अपना शृंगार करने को कहती है। अपनी प्राणप्रिया के अनुरोध को गौरव देते हुए श्रीकृष्ण सहर्ष अपने हाथों से राधा का शृंगार करते हैं।

आज भी ओडिशी नृत्य के माध्यम से गीतगोविन्द सर्वजन प्रिय हो रहा है। ओडिशि नृत्य ही जयदेव का ओडिशा प्रान्त होना सुचित करता है। उनके गीतगोविन्द काव्य का प्रचार आन्ध्र, तमिलनाडु तथा कर्णाटक में हुआ। फिर उत्तरभारत में खासतौर पर राजस्थान में मीराबाई के द्वारा हुआ। पहले विद्वानों का मानना था कि जयदेव बंगाल के राजा के सभाकवि है पर शिलालेख एवं प्राचीन मन्दिर जो ओडिशा में मौजूद है, उनसे प्रमाणित हुआ कि जयदेव जगन्नाथ के भक्त थे और उत्कल राज्य के वासी थे। गुरुग्रन्थ साहिब में भी भगत जयदेव का नाम लिखते है जो गीतगोविन्द के रचयिता हैं।

जयदेव ने इस काव्य में वैदर्भी रीति—माधुर्य व्यंजक वर्णों वाली शैली—का प्रयोग किया है। काव्य में कहीं-कहीं दीर्घ समासों का प्रयोग अवश्य हुआ है, परन्तु फिर भी दुर्बोधता अथवा क्लिष्टता नहीं आने पायी। वस्तुतः कवि ने विशेष-विशेष उत्सवों पर सर्व-साधारण के गाने के लिए ही तो गीतों की रचना की थी। अतः उन्हें सुबोध रखना आवश्यक ही था।

यहां यह उल्लेखनीय है कि विद्वानों ने इस सारे काव्य को 'अप्रस्तुत प्रशंसा' मानकर वाच्यार्थ में छिपे व्यंग्यार्थ को व्यक्त करने का प्रयास स्वीकार किया है। (प्रस्तुत के माध्यम से अप्रस्तुत का अथवा अप्रस्तुत के माध्यम से प्रस्तुत का वर्णन अप्रस्तुत प्रशंसा अलंकार कहलाता है।) उनके मत के अनुसार श्रीकृष्ण 'जीवों की आत्मा' के प्रतीक हैं। गोपियों की क्रीड़ा अनेक प्रकार का वह प्रपंच है, जिसमें अज्ञान-अवस्था में फंसी मनुष्यों की आत्मा भटकती रहती है। राधा ब्रह्मानन्द का प्रतीक है, जिसे प्राप्त करने पर ही जीवात्मा को चरम सुख की प्राप्ति होती है।

'गीतगोविन्द' को बड़ी ही प्रसिद्धि और लोकप्रियता मिली। जयदेव ने जिस ग्राम में रहते हुए 'गीतगोविन्द' की रचना की, उस गांव का नाम ही जयदेवपुर पड़ गया। कवि के समकालीन उड़ीसा के शासक राजा प्रताप रुद्रदेव ने अपने राज्य के गायकों, संगीतज्ञों और नर्तकों के लिए 'गीतगोविन्द' के पदों को गाने का आदेश जारी कर दिया। महाराज ने जयदेव को इस काव्य रचना के लिए 'कविराजराज' की उपाधि से विभूषित किया।

'गीतगोविन्द' जयदेव के जीवन काल में ही पर्याप्त रूप से प्रचलित एवं लोकप्रिय हो गया था—इसके अनेक प्रमाण मिलते हैं। दक्षिण में तो वह इतना अधिक प्रचलित हो गया कि इसके पद्यों को तिरुपति बालाजी के मन्दिर की सीढ़ियों पर द्रविण लिपि में खुदवाया गया। श्रीवल्लभ सम्प्रदाय में तो श्रीमद्भागवत् पुराण के समान इसकी प्रतिष्ठा है। वैष्णवों में यह विश्वास है कि 'गीतगोविन्द' जहां गाया जाता है, वहां भगवान का अवश्य ही प्रादुर्भाव होता है। इसी से इस सम्प्रदाय में इसे अयोग्य स्थान पर न गाये जाने का विधान किया गया है, जिसका कठोरता से पालन किया जाता है।

टीकाएँ

गीतगोविन्द के प्रथम टीकाकार उदयनाचार्य ने 'भावविभाविनी' टीका लिखी है। जगन्नाथ पुरी के अत्यन्त निकट प्राची के किनारे रहनेवाले उदयनाचार्य जदयदेव के प्रिय मित्र तथा प्रशंसक थे। सन् 1170 से 1198 के मध्य में 'भावविभाविनी' टीका लिखी गयी थी, जिसमें 100 श्लोक हैं। इसकी तीन मातृकाएँ उदयपुर और नागपुर में उपलब्ध हैं।